'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ६५ | वाराणसी, मंगलवार, २ जून, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

इंदोरा (पंजाब) १८-५-'५९

जीवन के सम्पूर्ण विकास के लिए संतुलित व्यवस्था का आविष्कार ही ग्रामस्वराज्य और ग्रामदान की बुनियाद है

आज एक भाई से चर्चा हो रही थी। उन्होंने पूछा कि ग्रामदान का क्या चित्र होगा? मैं चाहता हूँ कि उनके इस सवाल पर हम सब सोचें।

सुख नहीं, समाधान चाहिए

ग्रामदान ग्रामस्वराज्य की बुनियाद है। लोकमान्य तिलक ने कहा था कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। स्वराज्य मिलेगा तो उसका कैसा चित्र होगा? हम उसमें सुखी होंगे या दुःखी, इस प्रकार उस समय कोई नहीं सोचता था। सिर्फ हम लोग अंग्रेजों से यही कहते थे कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। हम आप के राज्य में सुखी हैं और स्वराज्य-प्राप्ति के बाद संभव है कि दुःखी हो जायँ, फिर भी हम स्वराज्य चाहते हैं। स्वराज्य हमारा धर्म है। उसके बिना हमारा बुद्धि-विकास नहीं हो सकता। कोई मालिक अपने बैलों को अच्छी तरह रखे तो बैल मालिक का उपकार मानेंगे। लेकिन मनुष्यों की हालत बैलों जैसी नहीं है। मालिक मनुष्यों को अच्छी तरह रखता हो, तब भी वे उसकी गुलामी करना पसंद नहीं करेंगे। मालिक के मातहत काम करने से मनुष्य को बुद्धि-विकास का मौका नहीं मिलता। अगर बुद्धि-विकास का मौका न मिले तो कितना भी सुख क्यों न हो, मनुष्य उस हालत में रहना पसंद नहीं करेगा। रूस में कम्युनिज्म का जो रूप बना है, उस पर भी यही आक्षेप है। चाहे रूसवाले अपने यहाँ की जनता को सुखी बनाने में कुछ समर्थ हुए हों, फिर भी वहाँ व्यक्तियों की बुद्धि का विकास नहीं होता। रूसवाले अपनी जनता को सुखी बना सकते हैं, क्योंकि उनके पास काफी जमीन है, विज्ञान है, अन्य दूसरे प्रकार की सुविधाएँ भी हैं। लेकिन सब प्रकार की सुविधाओं के बावजूद मनुष्य पर किसी प्रकार की पाबंदी रहे तो उसका समाधान नहीं हो सकता। हमारे लिए सुख से भी ज्यादा मूल्यवान वस्तु समाधान है। हमने अपने समाधान के लिए ही स्वराज्य की माँग की थी।

स्वतन्त्रः कर्ता

शास्त्रकार कहते हैं कि जो गुलाम है, परतंत्र है, उसके लिए कोई धर्म नहीं है। गुलामों के लिए शास्त्रकार एकमात्र यही आज्ञा देते हैं कि पहले गुलामी से मुक्त हो जाओ। पाणिनि ने कहा है "स्वतंत्रः कर्ता", जो स्वतंत्र हो, वही कर्ता हो सकता है। शास्त्रकार पूछते हैं कि जो जीव शास्त्र का अधिकारी होना चाहता है, वह नीति-आचरण करने के लिए स्वतंत्र है या नहीं? यानी जो स्वतंत्र नहीं है, उसे शास्त्र का अर्थ प्राप्त नहीं हो सकता। शास्त्र का अर्थ किसी को तब प्राप्त होता है, जब शास्त्र जिसे जो आज्ञा दे, वह उसे पालन करने लिए क्षम हो, समर्थ हो। जो मनुष्य नीति पर चलने के लिए आजाद नहीं हैं, उन्हें शास्त्रकार किसी भी प्रकार की आज्ञा नहीं देते।

संसार में ऐसे बहुत से जानवर हैं, जो मांसाहार नहीं करते। क्योंकि उनकी पचनेन्द्रियों में मांस पचाने की शक्ति नहीं होती। इसलिए उनका मांसाहार से मुक्त रहना कोई गुण नहीं है। शेर मांस ही खायेगा, घास नहीं खायेगा। मांस के बिना वह जी नहीं सकता। उसका मांस खाना अधर्म नहीं है। इसलिए उस पर मांसाहारी होने का दोषारोपण नहीं किया जा सकता और न गाय पर शाकाहारी होने का गुणारोपण ही किया जा सकता है। इन दिनों पश्चिम में जो शाकाहारी जमातें बनी हैं, उनमें हिरण आदि को सदस्य नहीं बनाया जा सकता, क्योंकि जानवर मांस खाने या न खाने के लिए आजाद नहीं हैं।

आजादी बुनियादी अधिकार है

आजादी एक बुनियादी चीज है। उससे नफा होगा या नुकसान, यह और बात है। कल एक भाई कह रहे थे कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद हमारे देश में इतना भ्रष्टाचार बढ़ गया है कि उतना भ्रष्टाचार अंग्रेजों के राज्य में भी नहीं था। इस पर हमने उनसे एक छोटा सा सवाल पूछा कि क्या आप इस परिस्थिति में अंग्रेजों को 'भारत छोड़ो' के बदले 'फिर भारत लौटो' कहना पसंद करेंगे। उन्होंने जवाब दिया 'जी नहीं'। मैंने कहा तब तो ठीक है। हमसे जितनी गलतियाँ हो सकती हैं, उनके बारे में मिलकर चर्चा करें और उन्हें सुधारने का प्रयत्न करें। हम स्वराज्य के लिए नालायक हैं। इसलिए जब तक लायक नहीं

बनते, तब तक हम अंग्रेजों को यहाँ रहकर शासन करने को नहीं कह सकते। अंग्रेजों के राज्य में हम दुःखी थे, यह बात सही है। लेकिन अगर हम सुखी होते, तब भी वह सुख आजादी की बराबरी नहीं कर सकता था।

स्वराज्य की व्याख्या

आज हम गलतियाँ करते हैं, क्योंकि हमें शासन चलाने का अनुभव नहीं है। पिछले चार-पाँच सालों से हम गुलाम रहे हैं, इसलिए हमने स्वराज्य चलाने की अक्ल खो दी है। आज जो गलतियाँ होती हैं, वे हमारी उसी गलती की सबूत हैं। कई लोग गांधीजी के पीछे पड़े और उनसे कहा कि आप अपने स्वराज्य की व्याख्या कीजिये। गांधीजी अक्सर स्वराज्य की व्याख्या नहीं करते थे। लेकिन आखिर एक दिन उन्होंने स्वराज्य की बहुत सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत करते हुए कहा कि 'स्वराज्य याने गलती करने का हक'।

माता भूमिः, पुत्रोऽहं पृथिव्याः

ग्रामदान होने के बाद का चित्र खूबसूरत होगा या बदसूरत, इसका जवाब हम आज क्या दे सकते हैं? हम तो सिर्फ इतना ही कह सकते हैं कि हम गाँव को खूबसूरत बनाने की कोशिश करेंगे। उसमें सारी अक्ल, चिंतनसर्वस्व और शक्ति लगा देंगे। माता-पिता चाहते हैं कि अपना बच्चा खूबसूरत हो। परन्तु मान लो बच्चा खूबसूरत पैदा नहीं हुआ तो क्या वे यह कहते हैं कि यह हमारा लड़का नहीं है। ग्रामदान के बाद हालत सुधारना या बिगाड़ना हमारी अक्ल पर निर्भर करेगा। ग्रामदान एक बुनियादी उसूल है। जमीन की मालकियत अधर्म है। उसे मिटाना चाहिए। उसे मिटाने में हम जितनी देर करेंगे, उतना ही दुनिया के लिए खतरा है। दो सौ साल पहले भारत में जमीन में मालकियत जैसी कोई चीज नहीं थी। कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक जब कि आमदरफ्त के साधन नहीं थे, उस समय भी हमारे सारे देश में एक ही रिवाज था। गाँव में कुम्हार, बढ़ई, वैद्य, शिक्षक आदि जो भी होते थे, उन्हें मजदूरी नहीं दी जाती थी। हर साल किसान की जो फसल आती, उसी में से अमुक हिस्सा उन्हें दिया जाता था। जिस साल फसल ज्यादा होती थी, उस साल सबको ज्यादा हिस्सा मिलता था और फसल कम होती तो कम हिस्सा मिलता था। बढ़ई जिसके घर में जो भी काम हो, कर देता था, उसको काम देखकर फसल नहीं दी जाती थी, बल्कि पहले से तय की हुई पद्धति के अनुसार फसल दी जाती थी। फसल पर सबका हक था। कुछ लोग खेती करते थे और कुछ लोग दूसरा काम। जमीन की मालकियत सबकी थी। हिन्दुस्तान की यही असली चीज है।" माता भूमिः, पुत्रोऽहं पृथिव्याः"। दुनिया में जितने भी लोग हैं, वे सभी भूमिपुत्र हैं। सबको उसकी सेवा करने का अधिकार है।

ग्रामस्वराज्य के भिन्न-भिन्न नमूने

ग्रामदान एक विचार है। ग्रामदान के बाद उत्पादन बढ़ेगा या नहीं, हम सुखी होंगे या नहीं, इसकी चर्चा हम ठंढे दिमाग से करें तो मालूम होगा कि ग्रामदान से उसका कोई ताल्लुक नहीं है। ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य होगा, बाबा का राज्य नहीं होगा। बाबा के विचार को ग्रामदानी गाँवों के लोग कबूल करें, यह आवश्यक भी नहीं होगा। हम ग्रामस्वराज्य चाहते हैं, इसलिए हर गाँव में अलग-अलग नमूना हो सकता है। मैं एक मिसाल दूँ! अभी महायुद्ध के बाद भारत को स्वराज्य मिला। इसके साथ ही सिलोन और बर्मा को भी स्वराज्य मिला। लेकिन तीनों स्वराज्य के तीन नमूने हैं। इसी प्रकार ग्रामदानी गाँवों में ग्रामस्वराज्य के भी भिन्न-भिन्न नमूने हो सकते हैं। इन दिनों हर बात का पैटर्न होता है। सारे प्रदेश में स्कूलों का एक ही पैटर्न होता है। वैसे ही एक ढ़ाँचे में हम ग्रामस्वराज्य को नहीं ढालना चाहते।

हर ग्रामदानी गाँव के स्वराज्य का भिन्न-भिन्न नमूना रहेगा। फिर भी उसमें तीन बुनियादी बातें रहेंगी।

१—गाँव में किसी की जमीन की व्यक्तिगत मालकियत नहीं रहेगी। सारी जमीन गाँववालों की होगी। सहकार में ग्राम-सभा का नाम रहेगा।

२—गाँव में ग्रामोद्योग खड़े किये जायेंगे, ताकि गाँव की दौलत गाँव में रह सके। बाहर से गाँववालों को ज्यादा चीजें खरीदनी न पड़ें। आज गाँव में मुद्राप्रधान अर्थरचना हो गयी है। उससे गाँववाले मुक्त हों और अपने आप की बुनियादी आवश्यकताओं में स्वावलंबी बनने की क्षमता प्राप्त करें।

३—गाँव में ऐसी तालीम चलेगी, जिससे बच्चे काम के साथ-साथ ज्ञान पायेंगे और चरित्रवान बनेंगे।

ये तीन बातें बुनियादी बातें हैं। ये सभी गाँवों में होंगी। बाकी हर गाँवों में अपने-अपने तरीके से सारा काम होगा। कहीं सामुदायिक खेती होगी और कहीं हर परिवार को अलग-अलग जमीन दी जायगी। इस बारे में गाँववाले जैसा तय करेंगे, वैसा होगा। समझने की बात यह है कि अर्थशास्त्र के बारे में किसी प्रकार का आग्रह न रखना, यही सर्वोदय का विचार है। यह प्रयोग की बात है। गाँव-गाँव में जो-जो प्रयोग होंगे, उनसे जितना लाभ होगा, वही हमारे लिए पर्याप्त होगा।

पावर के उपयोग में विवेक

एक सवाल यह पूछा गया है कि ग्रामदानी गाँवों में विद्युत्शक्ति (पावर) का उपयोग किया जायगा या नहीं? मैं कहना चाहता हूँ कि बिजली, भाप, पेट्रोल आदि शक्तियाँ काम में लायी जा सकती हैं। मैं उन पर विश्वास करता हूँ। मैं तो इस प्रतीक्षा में ही हूँ कि गाँव-गाँव में विकेंद्रित विद्युत्शक्ति आये। दूसरी शक्तियाँ केन्द्रित होती हैं, लेकिन 'इकोनामिक इनर्जी' विकेंद्रित हो सकती है।

उत्तम से उत्तम शक्ति, जो मनुष्य को उपलब्ध हो सकती हो, उसे इस्तेमाल करने का गाँव को हक है। बशर्ते कि उसके इस्तेमाल करने से गाँव के अन्दर शोषण न हो और गाँव के बाहर भी शोषण न हो। याने उस शक्ति की व्यक्तिगत मालकियत नहीं रहेगी। उससे जो लाभ होगा, उसका बँटवारा सारे गाँववालों में हो जायगा। उस शक्ति से जो उत्पादन होगा, वह बेचने के लिए नहीं, बल्कि खुद के उपयोग के लिए होगा। इन बातों को ध्यान में रखते हुए पावर का उपयोग किया जा सकता है।

कर्घे और मिल की प्रतिस्पर्धा

अभी एक भाई ने यह भी कहा कि जिस ढंग से 'इकोनामिक इनर्जी' के बारे में आप सोचते हैं, उस ढंग से खादी-कमीशन-वाले नहीं सोचते। मैंने कहा कि आप का कहना ठीक है। आज व्यक्तिगत मालकियत बनी हुई है, इसलिए उसे ध्यान में रखकर कमीशन को सारा सोचना पड़ता है। मैं भी मानता हूँ कि जब

तक व्यक्तिगत मालकियत है, तब तक कर्घे को बिजली लगाने में खतरा है। अगर मेरी यह बात समझना चाहते हैं तो आप को इसके लिए मद्रास जाना होगा। पंजाब में जितनी कारीगरी है, उससे ज्यादा कारीगरी मद्रास में है। यहाँ पर बहनों का वेश बनाने में मिल के कपड़े का इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन वहाँ बहनें साड़ियाँ पहनती हैं, जो कर्घे पर बुनी जाती हैं। जब सरकार ने कर्घे को बिजली लगाने का सोचा, तब उसका ज्यादा से ज्यादा विरोध वहाँ के बुनकरों ने किया। राजाजी ने उनका समर्थन किया। मैंने भी बुनकरों का समर्थन किया। आखिर मद्रास-सरकार ने अपना विचार वापस ले लिया और बुनकरों को अपने कर्घे पर बिजली लगाने या न लगाने की आजादी दे दी गयी। बिजली पर यह आक्षेप तो था ही कि उससे कुछ बुनकर बेकार हो जायेंगे। लेकिन उस पर बुनियादी आक्षेप यह है कि बुनकाम को सिखाने के लिए किसी भी सरकार को एक कौड़ी का भी खर्चा नहीं करना पड़ता। प्राचीन काल से यह कला वंशपरंपरागत चली आ रही है, लेकिन अब सरकार पैसा खर्च करके इस कला को खत्म कर रही है। कर्घे को बिजली लगने से हाथ की कारीगरी खत्म हो जाती है। एक दफा यह कला खत्म हुई तो फिर सदा के लिए इसे खत्म ही समझिये। फिर तो मिलें ही चलेंगी, कर्घे नहीं चल सकेंगे। मिल के साथ प्रतिस्पर्धा में हाथ-कर्घे टिके। मिलें उन्हें खत्म न कर सकीं, लेकिन बिजली के कर्घे उन कर्घों को खत्म कर देंगे। एक बार बिजली के कर्घों ने हाथ-कर्घों को खत्म कर दिया तो फिर बिजली के कर्घों को खत्म करना मिलों के लिए आसान हो जायगा। यह तो शतरंज का खेल है। इसलिए खादी-कमीशन बिजली के लिए अनुकूल नहीं है।

विज्ञान के लिए अहिंसा अनिवार्य

हम ग्रामदानी गाँव में बिजली को उपयोग में लाने के विचार से सहमत हैं। हम विज्ञान को बहुत चाहते हैं। इसीलिए हमारा अहिंसा का आग्रह है। व्यक्तिगत तौर पर मैं कहना चाहता हूँ कि अगर मेरा विज्ञान का आग्रह न होता तो मैं अहिंसा का इतना आग्रह न रखता। यद्यपि मैं करुणा को चाहता हूँ और भगवान की कृपा से मुझ में करुणा है भी, लेकिन मेरा अहिंसा का आग्रह केवल करुणामूलक नहीं है। मैं विज्ञान के प्रेम के कारण ही अहिंसा का आग्रह रखता हूँ। विज्ञान के लिए अहिंसा आवश्यक है।

एक बात समझने की है कि विज्ञान और यंत्रविद्या अलग-अलग है। हमारे यहाँ यह गलतफहमी है कि विज्ञान याने बड़े यंत्र। लेकिन यह गलतफहमी हमें दूर कर देनी चाहिए। विज्ञान याने सृष्टि का ज्ञान। इसलिए हमें यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि विज्ञान बड़े यंत्रों में प्रकट होता है, वैसे ही छोटे यंत्रों में भी प्रकट हो सकता है। अपने देश में इस समय इस परिस्थिति में कौन सा यंत्र इस्तेमाल होना चाहिए, इसका निर्णय विज्ञान नहीं कर सकता। निर्णय देने का काम आत्मज्ञान का है। विज्ञान और आत्मज्ञान दोनों मिलकर परिपूर्ण होते हैं। आत्मज्ञान के निर्णय के मुताबिक यंत्रों को कारगर बनाने का काम विज्ञान का है।

आज के वैज्ञानिक सरकार के गुलाम बन गये हैं। उन्हें संहारक यंत्र बनाने की आज्ञा दी जाती है और वे वैसे ही शस्त्रों का आविष्कार करते हैं। सारे वैज्ञानिक ऐसा ही करते हैं। आईन्स्टीन ने भी पहले एटम बम बनाने के लिए सम्मति दी थी। लेकिन आखिर में उसे पश्चात्ताप हुआ।

हिन्दुस्तान की आज की हालत में जो यंत्र उचित होगा, वह दूसरी हालत में अनुचित हो सकता है। जो यंत्र अमेरिका में उचित होगा, वह यहाँ के लिए अनुचित हो सकता है। उसके उचित-अनुचित होने के संबंध में हमें देश, काल और परिस्थिति देखकर निर्णय करना होगा।

ट्रेक्टर और हल का अर्थशास्त्र

हिन्दुस्तान में परती जमीन तोड़ने के लिए ट्रेक्टर का उपयोग किया जा सकता है। लेकिन हम अगर मामूली हल चलाने का काम ट्रेक्टर से करेंगे तो वह हिंदुस्तान के लिए उचित नहीं होगा। इसके कई कारण हैं। ट्रेक्टर कड़बी नहीं खाता। खाद नहीं देता। बैल कड़बी खाता है,खाद देता है। ट्रेक्टर 'क्रूड आयल' खाता है, जो हमारे पास नहीं है। वह विदेशों से मँगाना पड़ता है। ट्रेक्टर भी विदेश से मँगाना पड़ता है, उसकी दुरुस्ती भी हमारे यहाँ नहीं की जा सकती। हमारे यहाँ जमीन फी आदमी सिर्फ एक एकड़ है। हम बैलों को खाते नहीं। इसलिए हम बैलों को काम दिये बिना उन्हें कैसे सँभाल सकेंगे? अमेरिकावाले ट्रेक्टर चलाते हैं। उनके देश में ट्रेक्टर बनते हैं, दुरुस्त होते हैं और क्रूड आयल भी उनके पास है। वहाँ फी आदमी १२ एकड़ जमीन है। जन-संख्या कम है। काम बहुत है। वे बैलों को खाते हैं, गायों को पीते हैं और ट्रेक्टरों से काम लेते हैं। क्या गाय-बैलों को खाने का अर्थशास्त्र आप को मंजूर है? अगर नहीं, तब ट्रेक्टर और बैल दोनों का पालन करना हिंदुस्तानवालों के लिए संभव नहीं है।

कल अगर परमेश्वर की कृपा से हमारे ३६ करोड़ लोगों में से ३० करोड़ लोगों का संहार हो जाय तो आप नये सिरे से उसका उपयोग करने के बारे में सोच सकते हैं। फिर तो मैं भूदान भी नहीं माँगूँगा। लेकिन जब तक हिंदुस्तान में जमीन का रकबा कम है, जनसंख्या ज्यादा है और आप बैलों को खा नहीं सकते, तब तक आप ट्रेक्टर से काम नहीं ले सकते हैं।

यंत्र के बारे में हमारा क्या मंतव्य है, यह आज संक्षेप में मैंने साफ कर दिया है। आशा है आप यंत्र-विवेक के बारे में ठीक तरह से इन विचारों को समझेंगे। कौन-सा यंत्र काम में लाया जाय, इसका निर्णय आत्मज्ञान करेगा और उसको कारगर बनाने का काम विज्ञान करेगा। ●

प्रार्थना की महिमा

मनभर चर्चा की अपेक्षा कणभर अर्चा श्रेष्ठ है। "उठ भोर राम का चिंतन कीजै" इस वाक्य के लिखने का उद्देश्य यह नहीं है कि इसे घोखते बैठें, बल्कि इसका मूल उद्देश्य है : प्रातःकाल उठकर रामचिंतन करें।

काम का अधिकार मेरा है। फल ईश्वर के हाथ में है। इसलिए प्रयत्न के साथ-साथ ईश्वर की प्रार्थना आवश्यक है। प्रार्थना के संयोग से हमें बल मिलता है। इसलिए पास का संपूर्ण बल काम में लाकर और बल की माँग ईश्वर से करना, यही प्रार्थना का मतलब है।

परीक्षा पास होने के लिए ईश्वर से सहायता माँगना कौन सी आस्तिकता है? यह तो कम-अकली है, पुरुषार्थहीनता है। खेत में फसल नहीं आयी—करो ईश्वर से प्रार्थना, माँगो ईश्वर से मदद। मानो इन सब प्रश्नों को हल करने की शक्ति ईश्वर ने दी ही नहीं। ये ईश्वर की सहायता के विषय नहीं हैं। सकाम भावना से बाह्य कार्यों में ईश्वर की मदद माँगना हमें शोभा नहीं देता है।

प्रार्थना-प्रवचन बोचासण (खेड़ा) ३-११'-५८

अहिंसा की रक्षा और शान्ति-स्थापना अहिंसा का दावा रखनेवाले पक्षमुक्त सेवक से ही संभव

मैं गुजरात के समक्ष एक ही बात रखना चाहता हूँ, वह यह है कि अगर हम अहिंसा की रक्षा न करें तो अहिंसा भी हमारी रक्षा नहीं कर सकती। जैसा कि धर्म के लिए मनु ने कहा है—'धर्मो रक्षति रक्षितः'। वही बात अहिंसा के लिए भी लागू है। इसलिए हमें हिन्दुस्तान में यह हिम्मत कर दिखानी चाहिए कि देश के आन्तरिक क्षेत्र में कहीं भी अशान्ति उपस्थित होने पर पुलिस या सेना की जरूरत न पड़े। लोग स्वयं ही शान्ति रखें। अगर कहीं क्षोभ का प्रसंग उपस्थित हो तो जनता के सेवक ही उसे शान्त कर दें। अगर सर्वोदयवाले यह बात साबित करके नहीं दिखाते तो कहना पड़ेगा कि उनका जमाना लद गया।

गुजरात से साढ़े तीन हजार शान्ति-सैनिक चाहिए

यों तो हिन्दुस्तान के लोग अद्वैत से नीची बात कबूल ही नहीं करते, फिर भी व्यवहार में 'यह ऊँचा, यह नीचा' ये सारे भेद चलते ही हैं। दूसरी ओर साधनशुद्धि, साध्य-साधन की एकता आदि तत्त्वज्ञान गांधीजी के नाम पर चलते हैं। लेकिन व्यवहार-क्षेत्र में मौका आने पर चुप बैठ जाते हैं और सारा इन्तजाम पुलिस करती है। कोई पत्थर मारते हैं तो पुलिस उन पर गोली चलाती है। फिर एक-दूसरे की निन्दा चलती है। नरसी मेहता कहते हैं कि 'निन्दा न करे केनी रे, पर यहाँ 'निन्दा करे सोनी रे' चलता है। एक पक्ष दूसरे पक्ष की निन्दा करता है। ये निन्दक मेरे पास तक पहुँच आते हैं और उन्हीं बातों को चलाते हैं। लेकिन सोचने की बात है कि जिस काम के लिए मैं 'देहं वा पातयामि कार्यं वा साधयामि' की प्रतिज्ञा लेकर निकल पड़ा हूँ, उसके बारे में कोई भी चर्चा नहीं करता। मैं इन सब बातों पर चर्चा करना समय का अपव्यय समझता हूँ और अपना एक क्षण भी व्यर्थ गँवाना नहीं चाहता। मुझे तो गुजरात से कुछ काम लेना है और आप उसे दे सकते हैं, ऐसा मैं मानता हूँ। गुजरात की पौने दो करोड़ आबादी है। इनमें प्रति पाँच हजार पीछे एक के हिसाब से साढ़े तीन हजार शान्ति-सैनिक चाहिए।

नित्य-नैमित्तिक सेवा करनेवाले शान्ति-सैनिक

ये शान्ति-सैनिक सदैव जनता की सेवा करते रहेंगे। इनका एक हजार परिवारों के साथ संपर्क रहेगा और उनके शारीरिक दुःखों में हर संभव मदद देने की कोशिश करेंगे। मानसिक दुःखों में उन्हें सांत्वना देंगे और उनके पास विचारार्थ सर्वोदय-साहित्य पहुँचायेंगे। ये उनके साथ भूदान, ग्रामदान की बातें करेंगे और यह समझायेंगे कि ग्राम-स्वराज्य किस तरह लाया जाय तथा लोग किस तरह निर्भय होंगे। इनका लोगों से परिचय रहेगा और इनकी उपस्थिति स्नेह और शान्ति के स्थापनार्थ ही रहेगी। फिर भी किसी समय क्षोभ उभर पड़े तो अपनी जान जोखिम में डालकर भी ये शान्ति-स्थापना करेंगे। इस तरह ये नित्य सेवा और नैमित्तिक सेवा, दोनों प्रकार की सेवाएँ करेंगे। यह सेना नरसी मेहता के शब्दों में 'नित सेवा नित कीर्तन ओच्छव' और 'प्रसंगविशेष में ' शिर सारे नटवर ने वरिये' इस तरह का भक्तों का समूह होगा। अगर ऐसी शान्तिसेना खड़ी हो तो भारत का रंग ही बदल जाय और उसका सरकार पर भी असर पड़े। इतना ही नहीं, इसका असर अन्य राष्ट्रों पर भी होगा। जब मैं शान्तिसेना की बात उपस्थित करता हूँ तो विदेश से आये हुए लोगों को उसमें बड़ा उत्साह मालूम पड़ता है। इस तरह शान्तिसेना की यह बात अखिल भारतीय ही नहीं, अखिल जागतिक भी हो सकती है। ऐसा वे मानते हैं।

सर्वोदय-विचार से समस्याओं का हल

अगर हम ग्रामदान की शक्ति प्रकट कर दिखायें तो दुनिया को यह अनुभव हो जायगा कि देशों के सवाल हल करने की सामर्थ्य सर्वोदय-विचार में है। जमीन की मालकियत मिटाने के लिए आज तक खूनी क्रान्तियाँ ही हुई हैं और रक्त की नदियाँ बही हैं। लेकिन जब यही काम शान्ति से होने लगा है तो दुनिया को विश्वास पैदा हो गया है कि ये अहिंसक स्थिति-स्थापकता नहीं रखना चाहते। अभी तक तो यहाँ क्रान्तिवादी ही ऐसी हिम्मत करते थे। किन्तु आज जब ऐसा समूह बनने लगा है, जो शान्तिवादी और क्रान्तिवादी दोनों है तथा जो समाज की आर्थिक रचना बदलने की शान्तिमय हिम्मत करने लगा है तो दुनिया में विश्वास पैदा हो जाता है।

दुहरी शक्ति को प्रकट करनेवाला सर्वोदय

आज जिस अवस्था में दुनिया और समाज है, उसमें ऊँच-नीचभेद, सम-विषमभेद कायम है। ऐसी स्थिति में जब-जब अशान्ति हो (जो स्वाभाविक ही है), तब-तब बीच में पड़कर उस अशान्ति का प्रहार अपने ऊपर उठानेवाले तैयार हो जायँ तो सर्वोदय एक रक्षक शक्ति दिखा देगा। अर्थात् वह एक ओर समाज-क्रान्ति करने, समाज-रचना बदलने का काम करे तो दूसरी ओर जब तक समाज बदल नहीं जाता, तब तक जो अशान्ति हो, उसे अपने ऊपर लेकर शान्तिस्थापन करनेवाला तथा 'मालिक' कहलानेवाले वर्ग को भी अपनी जान देकर बचानेवाला सेवक-वर्ग खड़ा करे। सर्वोदय को ये दोनों काम करने होंगे। नहीं तो हममें और कम्युनिस्टों में फर्क ही क्या रहेगा? जमीन की मालकियत तो हम भी मिटाना चाहते हैं और कम्युनिस्ट भी। लेकिन लोगों को जैसे उनसे भय लगता है, वैसे ही हमसे भी लगे तो हममें और उनमें फर्क ही क्या रहा? हम ग्रामदान लेते समय मालिकों को अभयदान देते हैं। इस तरह सर्वोदय दुहरी शक्ति प्रकट करेगा, तभी वह विश्वसनीय और व्यावहारिक कार्यक्रम साबित होगा और तभी उसका दुनिया पर असर होगा। यह सारी हिम्मत गुजरात न करेगा तो और कौन करेगा?

शत्रु के लिए भी प्रेम-भावना हो

लोग बातें करते हैं कि 'अमुक-अमुक लोग ऐसे हैं, अमुक वैसे। उनके मन में हिंसा है, वे कुछ समझते ही नहीं। हम लोग उनसे द्वेष नहीं करते, उनका भला ही चाहते हैं। फिर भी वे हमसे सदा द्वेष करते हैं।' मैं कहता हूँ कि भाइयो! आप लोग अपने साथ द्वेष करनेवाले से द्वेष नहीं करते, इतना ही काफी नहीं, आप को उस पर प्रेम भी करना चाहिए। वे जितना द्वेष करते हों, उतने ही अनुपात में हमें उन पर प्रेम करना चाहिए। तभी हम उन्हें जीत सकते हैं। हम सिर्फ उनसे द्वेष नहीं करते, यह बहुत हलकी बात हुई, इसका कोई मूल्य नहीं है। इसलिए प्रतिपक्षी के प्रति प्रेम पैदा होना चाहिए।

गुणों के द्वारा प्रेम की जागृति हो

मुझे किसी ने पूछा कि द्वेष करनेवाले के साथ प्रेम कैसे किया जाय ? मैंने उन्हें एक दृष्टान्त देकर समझाया कि कोई कितना ही गरीब क्यों न हो, उसके घर में एक दरवाजा अवश्य रहेगा, भले ही अमीरों के घरों में कई दरवाजे और खिड़कियाँ हों। हरएक के घर में दरवाजा और दीवालें हुआ करती हैं। दरवाजा गुण है और दीवालें दोष। दुनिया में ऐसा कोई भी न निकलेगा, जो सर्वदोषसम्पन्न, साक्षात् दोषमूर्ति, मूर्तिमान दोषावतार हो। रावण में भी कुछ गुण थे ही। उसकी नगरी लंका में विभीषण था ही। इस तरह स्पष्ट है कि गुणरहित मानव दुनिया में हो नहीं सकता। हरएक में कौन-कौन से गुण हैं, इसे खोज निकालना चाहिए और उन्हीं गुणों की मार्फत उसमें प्रवेश करना चाहिए। यही हमारा व्यवसाय होना चाहिए। हम यह नहीं कह सकते कि हमें क्या पड़ी है, जो उसके पास जाकर उसके गुण ढूँढ़ते फिरें ? क्या हमें दूसरा धंधा नहीं है ? वास्तव में अहिंसावादियों के लिए अहिंसा के सिवाय दूसरा धंधा हो ही नहीं सकता। दुनिया में हिंसा चल रही है तो हम उन हिंसक लोगों का हृदय प्रेम से जीत लें—इसके सिवाय हमारा दूसरा कोई धंधा होना ही नहीं चाहिए। हमें सर्वथा बेकार बन जाना चाहिए, सिर्फ यही काम रहे। अगर हम ऐसी प्रेमशक्ति का अर्जन न करें और लोगों के साथ शंकालु बनकर बर्ताव करें तो अहिंसा-शक्ति की चल नहीं सकती। वह हार ही खा जायगी।

उत्साह के लिए विचार-भेद आवश्यक

रही मतभेदों की बात ! सो मतभेद तो होते ही हैं। सभी मेरे ही मतवाले हो जायँ तो मुझे बातें करने में उत्साह ही न रहेगा। फिर तो आप श्रोता, मैं वक्ता। यह विचारणा, कीर्तन किसी की भी जरूरत न रहेगी। फिर तो जीवन सर्वथा रसहीन ही बन जायगा। अतः विचार-भेद तो आवश्यक ही है। उसमें काफी चिन्तन होता है और परस्पर के विचारों की पूर्ति हो सकती है। अगर कोई समग्र मनुष्य हो तो उसके विचारों में पूर्ति करने की कोई जरूरत नहीं। लेकिन ऐसा न हो तो विचार-भेद अत्यावश्यक है। मुझे तो कोई भिन्न विचारवाला मिलता है तो बड़ा ही आनन्द आता है। भगवान ने विविध रचना इसीलिए की है कि अनेक प्रकार का रस चखा जा सके। अगर विचार-भेद न रहे तो अनेक रस, विविधता ही न रहे। सब कुछ मीठा ही मीठा हो तो अच्छा नहीं लगता। इसलिए विविधता तो चाहिए ही। फिर भी सज्जनों के मनों में कुछ समानता भी होती ही है। अगर किसी मन के साथ कोई भी मन सहमत न हो तो दोनों दुर्जन ही साबित होंगे। इसलिए सज्जनों के विचारों में कुछ समान अंश होना ही चाहिए और वह बहुत बड़ा होना चाहिए, छोटा-सा नहीं।

गुजरात : महान शान्ति-साधक

गुजरात में यह समान अंश है, अतः यहाँ सर्वोदय-विचार की प्रतिष्ठा और अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिए शान्तिसेना बननी चाहिए तथा उसमें दाखिल होना चाहिए। अगर गुजरात के लोग शान्तिसेना में दाखिल होने की हिम्मत न करें तो दूसरा कौन करेगा ? गुजरात की हड्डियों में हिंसा की शक्ति नहीं है। भारतीय सेना में मराठी, कन्नड़, पंजाबी लोग होते हैं, पर गुजराती बहुत ही कम होते हैं। गुजरात ने मुख्यतः शान्ति की ही साधना की है। यहाँ गांधीजी जो पैदा हुए, वह आकस्मिक घटना नहीं, गुजरात की इस तपस्या, शान्ति की साधना का ही वह परिणाम है। वैसे तो बिहार के भी अहिंसा के पराक्रम का परिणाम भगवान बुद्ध हैं, उनके बाद महावीर ने अहिंसा का पराक्रम दिखाया। किन्तु गांधीजी सबसे आखिरी हैं, बिलकुल नजदीक के, ताजे हैं। ऐसा गुजरात, जो कि हिंसा की शक्ति नहीं दिखा सकता, यदि अहिंसा का पराक्रम भी न दिखाये तो वह 'घर का न घाट का' हो जायगा।

पक्षमुक्त सेवक चाहिए

कई लोग कहते हैं कि आपकी शर्तें जरा कठोर पड़ती हैं। उनमें पक्षमुक्ति की शर्त कठिन है। मैं कहता हूँ कि आप अगर पक्षी ही बनेंगे तो कहाँ उड़ जायेंगे, इसका क्या भरोसा है ? आप चुनाव के समय आ जुटेंगे और चुनाव होते ही उड़ जायेंगे। आखिर सशस्त्र हिंसक सेना को भी तो पक्षमुक्त ही रखा जाता है ! तो अहिंसक सेना का भी पक्षमुक्त होना अत्यावश्यक है। पक्षमुक्त सेवक ही झगड़े के समय पहुँचकर शान्ति कर सकता है। पक्षीय या दलीय सेवक झगड़े का निराकरण और शान्ति स्थापित नहीं कर सकते। कारण, कितनी ही अशान्ति और झगड़े उन्हीं से पैदा होते हैं या उनसे संबद्ध रहते हैं। उनके आपसी झगड़ों का भी समाज पर असर पड़ता है। फलतः शान्ति-स्थापना असंभव हो जाती है। इसीलिए मैं पक्षमुक्ति की बात करता हूँ। यदि कोई मुझे यह सिद्ध कर दिखा दे कि बिना पक्षमुक्ति के भी यह काम हो सकता है तो मैं उसे छोड़ने को तैयार हूँ।

इस तरह यह बात आपके ध्यान में आ गयी होगी कि अगर यह काम हम न उठायें तो हमारा अहिंसा का दावा व्यर्थ हो जायगा। फिर तो हिन्दुस्तान में जैसे दर्शन की बातें चलती हैं, वैसी ही अहिंसा की भी बातें हो जायेंगी। अगर लोग अहिंसा की स्थापना के लिए काम न करेंगे तो हिंसा पर ही आधार रखना होगा। इसलिए बोचासण जैसे शिक्षाकेन्द्र में यह विचार सरलता से अपना लिया जायगा, यह विश्वास रखने का मुझे अधिकार है।

◆◆◆

अंकलेश्वर (गुजरात) ३-१०-'५८

प्रार्थना-प्रवचन

जीवन में नये मूल्यों की स्थापना के लिए हजारों कार्यकर्ताओं को आगे आना होगा

आज सूरत जिले की यात्रा पूरी कर भरूच जिले में प्रवेश किया है। सूरत जिले में १२ दिन की यात्रा हुई, उसमें जनता में अद्भुत उत्साह था। मुझे अखिल भारत में यही अनुभव आ रहा है कि सर्वोदय-विचार के प्रति लोगों में जितनी श्रद्धा, प्रेम और उमंग दीखती है, उतनी और किसी विचार के प्रति नहीं। सर्वोदय का अर्थ है, सभी का उत्कर्ष, सभी की उन्नति।। यह बात हमारे यहाँ पुराने जमाने से चली आ रही है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' हम कब से मनाते आ रहे हैं। इस दृष्टि से यह पुरानी ही बात है, किन्तु दूसरी दृष्टि से नयी भी है। हम लोग अब तक यह भावना व्यक्तिगत रूप में रखते थे, इसे सामाजिक रूप दे सकते हैं, यह कभी कोई नहीं समझता था। किन्तु आज हम सर्वोदय द्वारा उसे ही सामाजिक रूप देने जा रहे हैं। इसलिए लोगों

को इसके प्रति इतना आकर्षण हो रहा है।

स्वराज्य के बाद क्या किया ?

स्वराज्य प्राप्त हुए १० वर्ष हो गये, फिर भी हम गरीबों के लिए कुछ भी न कर सके। किसी का भी पूरा समाधान नहीं हुआ। हमने सारे काम सरकार पर सौंप दिये हैं, इसीसे काम में उत्साह नहीं आता। सहायता के पात्र लोगों के पास सीधी मदद नहीं पहुँच पाती। मेरे पैर में फोड़ा हुआ हो और उससे गहरी पीड़ा हो रही हो तो कोई कितना ही अच्छा मिष्टान्न खिलाये, कभी सुख न होगा, जब तक कि उस पीड़ा का उपचार न किया जाय। आज समाजरूपी शरीर में अनेक अंग दुःखी हैं, वे गरीब, पीड़ित, परित्यक्त, शोषित, दबाये हुए, शिक्षाविहीन, संपत्तिशून्य, अन्याश्रित, शक्तित्रिहीन पड़े हैं। उन्हें पहले राहत मिलनी चाहिए। तभी सारा शरीर सुखी होगा। किसी माता के चार बच्चे हों और उनमें से तीन घर में रहते हुए भी एक खो जाय तो उसे तब तक चैन नही पड़ता, जब तक कि वह चौथा न मिल जाय। उसके सामने यह गणित नहीं चल सकता कि तेरे तीन बच्चे तो हैं ही तो ३ में ही तुझे सुखी रहना चाहिए, एक का इतना दुःख क्यों ? माता के हृदय से इस गणित का कोई ताल्लुक नहीं रहता। इसी तरह आज समाज का पाँचवा पुत्र गरीब गुम हो गया है, वह बुभुक्षित पीड़ित है। ऐसी स्थिति में रेल, रास्ते, युनिवर्सिटी, कालेज, साहित्य एकेडेमी, नाटक, नृत्य आदि के आयोजनों से भी भारत माता को सुख नहीं मिल सकता।

सर्वोदय के प्रति अनुकूलता

ऐसी स्थिति में सर्वोदय की बात लेकर मेरे जैसा व्यक्ति इन दुःखी, पीड़ित, उपेक्षित और रुग्ण जनता के पास पहुँचता है तो लोग बड़ी आशा से आ जुटते हैं और अत्यन्त शान्ति से मेरा प्रवचन सुनते हैं। मेरी सभा में छोटे-बड़े, बच्चे-बूढ़े सभी आते हैं। यह सब देख कहना पड़ता है कि सर्वोदय के लिए अनुकूल वातावरण बन रहा है। यह बात बड़ी ही आशाजनक है। आज सर्वोदय का साहित्य जितना खपता है, उतना और कोई साहित्य नहीं खपता। एक जमाने में साम्यवादी साहित्य की बहुत माँग थी, पर आज वह स्थिति नहीं रह गयी है। इतनी सारी अनुकूलता रहते हुए यदि हम सब मिलकर प्रयत्न करें तो मैं समझता हूँ कि एक वर्ष के भीतर हम हिन्दुस्तान में सर्वोदय का चित्र देख सकते हैं। विज्ञान तेजी से बढ़ रहा है तो इस युग में काम भी तेजी से होता है। विचार सर्वत्र फैल जाते हैं।

केवल पाँच हजार !

अभी-अभी जे० पी० यूरोप से लौटे हैं। वे कह रहे थे कि "वहाँ के बड़े-बड़े लोग मुझसे बहुत ही उत्सुकता से पूछते थे कि 'आप के यहाँ काम चलता है, उस काम में कितने लोग लगे हुए हैं ?' मैंने ग्रामदान-कार्यकर्ता, खादी-ग्रामोद्योग के कार्यकर्ता आदि सभी कार्यकर्ताओं को गिनाते हुए उनकी पाँच हजार संख्या बतायी। यह सुनकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। कहने लगे कि 'चालीस करोड़ जनसंख्या में से सिर्फ पाँच हजार लोग ही यह काम करते हैं ? क्या इतना बड़ा काम चार-पाँच हजार लोगों से ही होगा ? ऐसे काम के लिए तो लाखों लोग चाहिए। क्योंकि यह काम सारी दुनिया का पथ-प्रदर्शन करेगा'।" इस काम से दुनिया को शान्ति से समस्याएँ हल करने का रास्ता मिलेगा। इसीलिए दुनिया का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ है। सिर्फ पाँच हजार लोग ही यह काम करते रहें तो विज्ञान के युग में यह कब और कैसे पूरा होगा, इसका भी कुछ हिसाब लगाया है ? मैं भी हमेशा यही कहता आ रहा हूँ कि आप लोग हजार, दो हजार कार्यकर्ताओं की क्या बात करते हैं ? हजार की बात करनेवाला भारतीय नहीं है। वह तो लाखों और करोड़ों की बात किया करता है।

मेरा काम सारे देश का काम है

आज सर्वत्र यही शिकायत सुनी जाती है कि प्रचार के लिए आदमी नहीं मिलते। क्या किया जाय ? इसलिए मैं पूछना चाहता हूँ कि आखिर ये शिकायत करनेवाले कौन हैं ? अगर बैल शिकायत करे कि आदमी नहीं मिलते तो कुछ बात भी है। लेकिन आदमी ही आदमी के अभाव की बात कहे तो क्या शोभा देगा ? मेरा काम कौन करेगा, यह पूछने की बात ही बेकार है। ऐसा कहनेवाले ही यह काम करें। आप ही लोग मेरे प्रचारक हैं। एक बार असेम्बली के मेम्बरों के साथ मेरी बातचीत हुई। मैंने उनसे पूछा : 'आप लोग असेम्बली में कितने दिन जाते हैं ?' उन्होंने कहा : 'साल में पाँच महीने।' इसपर मैंने कहा : लेकिन आपको वेतन तो पाँच महीने का ही नहीं मिलता, बारह महीने का मिलता है। इसलिए शेष सात महीने का वेतन आपको बाबा का काम करने के लिए दिया जाता है, ऐसा मानिये और शेष समय में बाबा का काम कीजिये। शिक्षकों को भी छह महीने छुट्टी होने के बावजूद बारह महीनों का वेतन मिलता है। ये सभी बाबा के ही नौकर हैं, ऐसा समझना चाहिए। मेरी कोई संस्था नहीं, फिर भी सभी संस्थाओं के और संस्था के बाहर के भी लोग मेरे हैं। वे सभी मुझे मदद दें तो देखते-देखते भारत में ज्योति प्रकट हो जायगी।

जन-शक्ति का ह्रास

गुजरात में इस काम के लिए लोगों की कमी महसूस होगी, ऐसा मैं तो नहीं मान सकता। गांधीजी का गुजरात, गर्वीला गुजरात आखिर आज किस बात पर गर्व करता है ? क्या आज आप पाटण की प्रभुता और उसकी जाहोजलाली याद करते हैं ? आज वह किस काम आयेगा ? आज की क्या प्रभुता है, यह बताइये। पुरानी कथाओं से काम न चलेगा ? कल भरपेट खा लेने से आज की भूख थोड़े ही शान्त हो सकती है ? गांधीजी ने काफी काम किया। लेकिन उनके जाने के बाद क्या चल रहा है ? जहाँ जायँ, वहाँ सरकारी नौकर ही हैं। आखिर यह क्या है ? जब हमारी सरकार न थी, तब स्वतंत्र जनशक्ति से काम चलता था, लेकिन आज तो लोगों में सभी काम सरकार के सहारे ही करने की आदत पड़ गयी है। जीवन का सारा व्यवहार प्रतिनिधियों को सौंप दिया गया है। भोजन, सोने आदि भोगों का अधिकार प्रतिनिधियों को नहीं सौपा गया, इतना ही अभी बाकी है। ये प्रतिनिधि आपके नौकर हैं। लेकिन इनके नौकरों के नौकरों के नौकर पुलिस आपके गाँव में पहुँच जाते हैं तो आप उनसे डरने लगते हैं। नाम तो 'लक्ष्मी', पर पास में भूँजा चना भी नदारद ! इसी तरह नाम के तो आप मालिक हैं, पर नौकरों के नौकरों के नौकरों से भय खाते हैं। आपके स्वतन्त्र भारत में वे चाहे जैसी जोर-जबर्दस्ती कर सकते हैं। यह खूब ही रही। इस तरह स्पष्ट है कि आज सब कुछ सरकार को सौंप देने के कारण हम खतरे में हैं। अगर सारा राज्यतन्त्र केन्द्र के अधीन हो तो सेना के बगैर छुटकारा नहीं। जब तक जन-शक्ति से काम करनेवाला स्वतन्त्र सेवक-वर्ग खड़ा नहीं होता, जब तक भारतव्यापी सेवा की योजना नहीं की जाती, तब तक मैं यह नहीं मान सकता कि

सर्वोदयविषयक आशा सफल होगी। इस दिशा में निराश होने का समय न आये, इसीलिए मैं शान्ति-सेना की बात रख रहा हूँ। इस पर आप लोग विचार करें और शान्ति-सैनिकों में अपने नाम दें। इन सैनिकों के योगक्षेम के लिए और सम्मति के तौर पर घर-घर सर्वोदय-पात्र रखना चाहिए तथा संपत्तिदान की वर्षा होनी चाहिए।

गांधी-श्रद्धा की कसौटी

गुजरात की कांग्रेस में अभी दरार नहीं पड़ी है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रान्तों की कांग्रेस कठिन स्थिति में है। यहाँ गांधी-विचारवाले बहुत-से लोग अन्य दलों में भी हैं और वे गांधीजी के ही बच्चे हैं। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि गुजरात इतना काम अवश्य करे।

आज जनता ने जो श्रद्धा दिखाई है, अगर उसका उपयोग किया जाय तो उस पूँजी से सर्वोदय का बहुत अच्छा व्यापार गुजरात में हो सकता है, इसका मुझे पहले से ही विश्वास था। गुजरात के दर्शन के बाद तो वह और भी दृढ़ हो गया। ऐसा ही दृश्य बिहार में देखने को मिलता था। वहाँ दिनभर स्त्री-पुरुषों का ताँता लगा रहता था। लोग कहते हैं कि बिहार में काफी श्रद्धा है, पर व्यावहारिक ज्ञान कम है। लेकिन गुजरात में तो इससे उलटा दृश्य देखने को मिलता है। बिहार में जो श्रद्धा है, वह गुजरात में नहीं, ऐसी बात नहीं। बिहारवाले कहते हैं कि गांधीजी का गुजरात और गांधीजी का बिहार। बिहार-वालों की गांधीजी में जो श्रद्धा थी, वही विशेष श्रद्धा गुजरात में भी है। इसलिए जो काम बिहार में हो सकता है, वह गुजरात में भी होना चाहिए। सात वर्ष की मेरी पदयात्रा के बाद गुजरात में अत्यधिक संगीन काम हो सकता है, ऐसा मैं मानता हूँ।

◆◆◆

अकाली दल की कार्यकारिणी-समिति के सदस्यों में

होशियारपुर (पंजाब) १२-५-'५९

वह धर्म निकम्मा है, जो कोई क्रान्ति की हरारत महसूस नहीं करता

पंजाब में मैं देख रहा हूँ कि सबके दिलों में मेरे लिए बहुत प्रेम है। सभी लोगों की यह तो ख्वाहिश है कि जब हम यहाँ आये हैं तो अब कुछ न कुछ ठोस काम हो और पंजाब की ताकत एक होकर प्रगट हो। मैंने सारे हिन्दुस्तान में जगह-जगह सज्जनों की सहानुभूति पाई है। आसाम छोड़कर बाकी सारा हिन्दुस्तान देख लिया। मनुष्यों के साथ सम्पर्क साधने में मेरे लिए कहीं भी किसी भी प्रकार की रुकावट पैदा नहीं हुई। समस्त सम्प्रदायों, दलों तथा धर्मों के लोग मेरे पास आते हैं, दिल खोलकर बातें करते हैं। शायद आज हिन्दुस्तान में दूसरा ऐसा कोई शख्स नहीं है, जिसके पास इस तरह से लोग मुक्त हृदय से बातें करें।

मैं केवल विचार देता हूँ

मैंने मास्टर (तारासिंह) जी से कहा कि आपके प्रमुख लोगों के सन्मुख विचार रखने में मुझे संतोष होगा। यद्यपि मैं अपने विचारों को खुले हृदय से सबके सामने रखता हूँ, फिर भी आपको यह निश्चित समझ लेना चाहिए कि मेरा किसी भी विचार के बारे में किसी तरह का कोई आग्रह नहीं है। जिसे मेरी बात जँचे, वह माने; जिसे न जँचे, वह न माने। मानना या न मानना, यह सामनेवाले शख्स पर निर्भर करता है। मैं तो सिर्फ विचार देता हूँ। केवल लोगों तक विचार पहुँचा देने का काम मेरा है। विचार पहुँचाने के बाद उसका क्या परिणाम आयेगा, यह देखने के लिए भगवान ही काफी है। मुझे उस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं है।

मैं भूमि-समस्या हल करने के लिए एक मिशन लेकर घूम रहा हूँ। फिर भी इतने समय में मुझे कभी जमीन मिली तो खुशी हुई और न मिली तो नाराजगी हुई हो—ऐसा अनुभव नहीं आया। बिहार में मुझे प्रतिदिन लगभग दो हजार एकड़ जमीन मिली, लेकिन एक दिन गया जिले में केवल सवा एकड़ जमीन मिली तो उस दिन भी मुझे किसी प्रकार का खेद नहीं हुआ। उल्टे मैंने उस दिन के भाषण में कहा कि आज केवल सवा एकड़ मिली है, यह अच्छा हुआ। हर रोज मैं जहाँ-जहाँ जाऊँ, वहाँ-वहाँ के लोग मेरी बातें सुनते ही मुझे हजारों एकड़ जमीन देने लग जायँ तो अवश्य ही एक न एक दिन मैं घबरा जाऊँगा। लोग विचार समझे बिना अगर मुझे तनिक भी दें तो मुझे बहुत दुःख होगा। इस प्रकार कम जमीन मिलने पर भी मैंने कभी भी मायूसी, असंतोष या दुःख का अनुभव नहीं किया। इससे मेरा विचार अब केवल मेरा नहीं रहा, वह जनता का हो गया है।

धर्मवाले यह क्यों नहीं समझते ?

राजनैतिक पक्षवालों को जन-सम्पर्क की जरूरत है। भूदान के काम से जन-सम्पर्क बहुत ही आसानी से हो सकता है। इस-लिए सभी पक्षवालों ने भूदान के काम में कुछ न कुछ मदद दी है। लेकिन हमें अभी तक इसके लिए धार्मिक लोगों की मदद नहीं मिली! दो-चार धार्मिक पुरुषों ने जरूर इस काम में दिल-चस्पी ली, किन्तु बाकी सभी कोई तटस्थ रहे। इसका क्या कारण है ? ऐसे करुणाप्रधान कार्य में धर्मवालों को उत्साह क्यों नहीं आता ? क्या मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारावालों को यह काम नहीं उठा लेना चाहिए ? आज मन्दिर आदि सभी धर्मस्थानों में माया एकत्रित हो गयी है। जहाँ माया आती है, वहाँ अच्छे से अच्छे लोगों का चित्त चलित हो जाता है। संसार में पड़े हुए लोगों की जो हालत होती है, उससे भी बदतर हालत इन माया-ग्रस्त मन्दिर-मठवालों की होती है।

मैं जगन्नाथपुरी गया था, तब मैंने गाँव-गाँव में लोगों को मन्दिरवालों के खिलाफ शिकायत करते हुए देखा है। कई लोगों ने हमारे पास शिकायत की कि ये मन्दिरवाले गरीबों का भयंकर शोषण करते हैं। मन्दिरवालों की जमीन में काम करने-वाले मजदूर की हालत बहुत ही खराब है। उनकी हालत पर मन्दिरवालों को तरस नहीं आती! वे हरदम यही सोचते हैं कि हम तो भगवान के लिए ही इनको चूसते हैं। उनकी आमदनी से भगवान को भोग लगता है, इसलिए मजदूरों से जितना कस-कर काम लेते हैं, उतना ही उन्हें पुण्य मिलता है। इस प्रकार सार्वजनिक काम के लिए गलत ढंग से पेश आने में भी उन्हें संकोच नहीं होता।

मन्दिर, मस्जिदवाले भूदान के काम को अच्छा तो कहते हैं, पर करते नहीं। क्योंकि करने के लिए आगे आयें तो उन्हें अपनी गाँठ खोलनी पड़ती है। पूजा, उत्सव, लंगर आदि चलते हैं तो धर्मवाले उसे ही सब कुछ मान लेते हैं। गरीबों के प्रति प्रत्यक्ष सहानुभूति दिखाने के बदले क्रियाकांडों में ही

अपने आपको उलझाये रखकर धर्मवाले मन को जो झूठा आश्वासन देते रहते हैं, वह कितना गलत है, यह वे क्यों नहीं सोचते ?

ऐसे धर्म से नास्तिकता भली

गुरु नानक कामरूप (आसाम) से लेकर मक्का तक और श्रीनगर से लेकर सिलोन तक घूमे। लोगों को बहुत-ही उत्साह के साथ सद्विचार समझाते थे। अगर उन्होंने घूमने के बजाय कहीं मठ में बैठना पसंद किया होता तो क्या उनकी चीज फैल सकती थी ? लोगों के पास पहुँचना और उन्हें समझाना ही धार्मिकों का आवश्यक कर्तव्य है। जिस कर्तव्य को पुराने धर्माचार्यों ने समझा, उस ओर आज मन्दिर, मस्जिद और गुरुद्वारावालों का कोई ध्यान नहीं है। नई तपस्या हो नहीं रही है और उधर पुरानी तपस्या सतत क्षीण हो रही है। जानते हैं इसका क्या फल होगा ? ये सारे धर्म क्षीण हो जायेंगे।

इन दिनों कहा जाता है कि दुनिया में नास्तिकता बढ़ रही है। इससे सभी धार्मिक भयभीत हैं। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि मुझे उस नास्तिकता से कोई खतरा नहीं लगता। मैं उन ईमानदार नास्तिकों को लाखगुना पसंद करता हूँ, बनिस्बत उन आस्तिकों के, जो भगवान का नाम लेकर इन्सान को चूसते हैं। अल्लाह का नाम लेकर दीन, हीन, गरीबों को ही चूसनेवालों पर अल्लाह कैसे खुश होगा ? गीता का नाम लेनेवाले गरीबों को लूटते रहेंगे तो क्या उन्हें धार्मिक कहा जा सकेगा ? धर्म का नाम लेने से कोई धार्मिक नहीं हो जाता और न भगवान का नाम लेने से ही भक्त होता है। जिसके जीवन में ईमान न हो, आचरण में अहिंसा न हो, व्यवहार में धर्म न हो, वह आस्तिक नहीं हो सकता। जिस नास्तिक के पास सचाई हो, वह नामधारी आस्तिक से भगवान के ज्यादा नजदीक है।

यह काम अव्यावहारिक नहीं है

अब मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि आप जैसे लोगों ने अब तक इस काम को क्यों नहीं किया ? क्यों आप अभी तक तटस्थ रहे ? मेरे जैसा पंजाब के बाहर का एक शख्स आकर यहाँ काम करे और आप बैठकर देखते रहें, क्या यह अच्छा है ? आपको इस बारे में एक निर्णय करना चाहिए।

क्या आप हमारे इस काम से धर्म के लिए या और किसी भी चीज के लिए खतरा महसूस करते हैं ? खतरा नहीं तो क्या आप समझते हैं कि इसमें कोई गलती हो रही है ? अगर गलती भी नहीं है तो क्या आप इसे अव्यावहारिक मानते हैं ? मैं आप से कहना चाहता हूँ कि अगर हमारा यह कार्यक्रम अव्यावहारिक होता तो हमें ६ लाख लोगों से दान न मिलता और न १४ हजार ग्रामदान ही प्राप्त हुए होते !

कत्ल और कानून असफल

जमीन की समस्या सारे एशिया की समस्या है। इस समस्या का हल आपको कत्ल से, कानून से या करुणा से करना ही होगा। कत्ल से क्या होता है, इसका परिणाम आपसे छिपा नहीं है। कत्ल से अच्छी चीज भी बुरी बन जाती है। कानून के परिणामों से भी आप अनजान नहीं हैं। देश में कितने कानून बने हैं। क्या उन सब पर अमल हो रहा है ? कानून से जमीन बँटना असम्भव है। अगर कानून का आश्रय लेकर हम जमीन बाँटने का काम करेंगे तो गाँव-गाँव में झगड़े चलेंगे। उन झगड़ों को मिटाने के लिए पुलिस की जरूरत पड़ेगी। उसका नतीजा कितना भयंकर होगा ? आपको यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि आज की परिस्थिति में कानून से कुछ भी होनेवाला नहीं है। लेकिन अगर मान लीजिए—कानून से समस्या का हल हो भी जाय तो धर्म बढ़नेवाला नहीं है। धर्म तो तभी बढ़ेगा, जब हम इस समस्या का निराकरण करुणा से करेंगे। दुनिया में सभी चीजें बढ़ें, लेकिन धर्म न बढ़े तो भयंकर खतरे की आशंका है। हमारे यहाँ अमीरी आ जाय, लेकिन धार्मिकपन न आये तो अमीरी खतरनाक साबित होगी। धर्म से अनुप्राणित गरीबी धर्महीन अमीरी से बेहतर है।

अजमेर-सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर मास्टर जी ने एक बड़ी बात कही थी कि "पहले मुझे आपके इस आन्दोलन के प्रति आकर्षण नहीं था, लेकिन जब यह आक्षेप उठाया गया कि भूदान-आन्दोलन से गरीबी का बँटवारा हो रहा है तो मेरा दिल इस काम की तरफ आकृष्ट हो गया है। गुरुवाणी की मुख्य तालीम है—बाँटकर खाओ। इसलिए अगर गरीबी बँटती है तो धर्म के खयाल से उतनी बड़ी बात हो जाती है, जितनी बड़ी बात अमीरी बँटने से नहीं होती।"

भूदान-आन्दोलन एक धर्म-विचार है। आप सभी लोग धर्म-विचार से प्रेरित हैं। धर्म के लिए आपके अन्तःकरण में अत्यन्त श्रद्धा है। उस श्रद्धा से आप इस धर्मकार्य को उठा लीजिये। यही मेरी आपसे प्रार्थना है।

किसी भी कार्य में सरकारी दखल न हो

आप कहते हैं कि धर्म के मामले में सरकार का दखल नहीं होना चाहिए। मैं आपकी बात से सहमत हूँ। लेकिन मैं इससे भी आगे बढ़कर इतना और जोड़ देना चाहता हूँ कि किसी गाँव में भी सरकार का दखल नहीं होना चाहिए। सर्वत्र धर्म फैले। धार्मिक भावनाओं से प्रेरणा पाकर सभी लोग सहजीवन जीयें गाँव की योजना अपने आप बनायें। ◆◆◆

[चालू]

अनुक्रम

१. जीवन के सम्पूर्ण विकास के लिए संतुलित व्यवस्था...
इंदौरा १८ मई '५९ पृष्ठ ४६१
२. अहिंसा की रक्षा और शान्ति-स्थापना अहिंसा का....
बोचासण ३ नवंबर '५८ ,, ४६४
३. जीवन में नये मूल्यों की स्थापना के लिए....
अंकलेश्वर ३ अक्टूबर '५८ ,, ४६५
४. वह धर्म निकम्मा है, जो कोई क्रान्ति....
होशियारपुर १२ मई '५९ ४६७

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी